श्रम भागीदारी में महिलाओं की स्थिति

8 मार्च को प्रतिवर्ष "अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस" मनाया जाता है। भारत में इसका उत्सव सिर्फ दमदार महिला अधिकार कार्यकर्ता ही मनाती दिखती हैं। भारत की आम घरेलू महिला के लिए यह उत्सव का पर्व कैसे हो सकता है, जब पूरे देश में महिलाओं के प्रति यौन-हिंसा की घटनाएं आम हों, जब बलात्कारी से विवाह का प्रस्ताव देने वाले न्यायाधीश मौजूद हों, और जब महामारी से जन्मी बेरोजगारी की गाज पुरूषों की तुलना में महिलाओं पर अधिक गिरी हो।

विश्व बैंक के अनुसार 1990 और 2019 के बीच भारत की श्रम भागीदारी में पुरूषों का प्रतिशत जहाँ 84% से 76% पर आ गया, वहीं महिलाओं का 30% से 21% पर आ गया था। 2004-05 में, यह बढ़कर 32% पर पहुँचा था। दक्षिण एशिया में भारतीय महिलाओं की श्रम-भागीदारी पाकिस्तान और अफगानिस्तान से भी कम है। भारत में अधिकांश श्रमिक महिलाएं अनौपचारिक क्षेत्र में काम करती हैं।

इन सब कारणों में सबसे ऊपर देश की सामाजिक और सांस्कृतिक बनावट है। महिलाओं का स्थान घर माना जाता है। उनके कामकाजी होने को घर की कमजोर आर्थिक स्थिति और उनके बिगड़े चरित्र से जोड़कर देखा जाता है।

इस दमनकारी संस्कृति को बदलना होगा। जब देश में आधे से अधिक संभावित कर्मचारियों को घरेलू अवैतनिक कार्य में संलग्न रखा जाता है, तो जनसांख्यिीय लाभांश की बात करना बेकार है, क्योंकि उसका कोई वास्तविक लाभ नहीं मिल रहा है।

मान लें कि महिलाएं भी पुरूषों के बराबर श्रम की भागीदार बन जाएं, तो क्या वे रोजगार के उपलब्ध अवसरों में ही प्रतिस्पर्धा करेंगी और मजदूरी को नीचे गिराएंगी, या वे रोजगार के नए क्षेत्रों का निर्माण करेंगी और कुल उत्पादन में इजाफा करेंगी ? अन्य देशों का अनुभव बताता है कि महिलाओं की श्रम-भागीदारी बढ़ने से उत्पादन और आय के समग्र

स्तर के बढ़ने से अंततः सभी को लाभ होता है। भारत में भी कार्य-संस्कृति को बदलने की जरूरत है, जिससे महिलाओं की क्षमता को पहचाना जा सके, और राष्ट्र के विकास में उसका उपयोग किया जा सके।

'द इकॉनॉमिक टाइम्स' में प्रकाशित संपादकीय पर आधारित। 8 मार्च 2021